रासलीला

प्रेम का मण्डल

‘भागवतपुराण’ की एक कथा पर आधारित

भाग दो :

पूर्णिमा की रात्रि

सर्वेश्वर श्रीकृष्ण चुपके-से वृक्षों के बीच चलते-चलते वन में पहुँच गए। वे इतने धीमे-धीमे और कोमलता से चल रहे थे कि हिरण को भी उनका वहाँ से चलना सुनाई नहीं दिया। चलते-चलते वे आ पहुँचे यमुना के तट पर जो उदित होते चन्द्रमा तले रुपहली चमक से जगमगा रही थी। चारों ओर झींगुरों की आवाज़ें और मेंढकों का टर्राना सुनाई दे रहा था और रात्रि के पुष्पों की सुगन्ध सारे वातावरण को महका रही थी। भगवान श्रीकृष्ण वातावरण का आस्वाद लेने के लिए थोड़ा ठहर गए—वे उन ध्वनियों को सुनने लगे, सुगन्ध का आनन्द लेने लगे और अपने पैरों के नीचे धरती व छोटी-छोटी डण्डियों के स्पर्श को महसूस करने लगे। उस रात्रि को सारा वन विशेष रूप से चैतन्य लग रहा था। परछाइयों और झुरमुट के पीछे से आँखें झाँक रही थीं, मानो हर पक्षी, हर पशु और हर कीट उस दृश्य को देखने आया हो। ऐसा लग रहा था मानो वृक्ष खुद भी अत्यन्त एकाग्र व सजग थे और उनका ध्यान भी उसी ‘लीला’ की ओर था जो बस घटित होने ही वाली थी।

बिना कोई आवाज़ किए भगवान कृष्ण पेड़ों के आगे निकले और नदी के किनारे कुछ ऊँचाई पर स्थित एक खुले मैदान की ओर चल दिए; मैदान के चारों ओर चाँदी-सी चमचमाती रेत झिलमिला रही थी। उन्होंने अपनी मुरली को अपने अधरों से लगाया और उसमें एक सुमधुर स्वर छेड़ा। वह शुद्ध और मृदुल स्वर रात्रि की हवा में तरंगित हो उठा।

आस-पास के गाँवों में गोपियाँ सन्ध्या के अपने घर-गृहस्थी के कार्य निपटा रही थीं। परन्तु उनमें से जो गोपियाँ सबसे सतर्क थीं, उन्होंने अपने कान लगाए और सुना। क्या यह कान्हा की बंसी थी? उन्होंने फिर से सुना। कुछ नहीं था। उस पहली पुकार पर केवल राधा ही घर से निकलीं, चुपचाप, दबे-पाँव। अन्य गोपियाँ पुनः अपने घर के कामकाज में लग गईं—सब्ज़ी चालने में, रोटियाँ बेलने में और छोटे भाई-बहनों को सुलाने में।

और वह ध्वनि दोबारा सुनाई दी, बिल्कुल स्पष्ट : भगवान की मुरली की दिव्य ध्वनि, हृदय को मोह लेने वाली ऐसी ध्वनि जिसके आगे अन्य सब कुछ फीका पड़ गया।

इस बार, गाँव के हर घर में, गोपियाँ जो-जो कार्य कर रही थीं, उन्होंने उसे वहीं छोड़ दिया। चावल उफनकर गिर गए, भाई-बहनों को माताओं और दादा-दादियों की गोदी में डाल दिया गया। कुछ बिखरी-सी अवस्था में, बिना किसी तैयारी के, गोपियाँ जिस अवस्था में थीं वैसी ही अपने-अपने घरों से दौड़ पड़ीं—अपने वस्त्रों को जैसे-तैसे सँभालते हुए, अपनी सुध-बुध खोकर वे दौड़ रही थीं; उस पल उन्हें बस एक ही चीज़ दिखाई दे रही थी, और वह थी, कान्हा के साथ होना।

बाँसुरी की ध्वनि अब भी आ रही थी—जादुई, मनमोहक, अपने में एक वादा लिए हुए—और गोपियाँ दौड़ लगा रही थीं, वृक्षों की जड़ों पर से फिसल रही थीं, काँटों में उनके बाल फँस रहे थे, पर उनमें से हरेक चाहती थी कि वही कृष्ण तक सबसे पहले पहुँचे और उनके प्रेम को जीत ले।

यमुना तट पर पहुँचकर उन्होंने देखा कि कान्हा उस मैदान में एक शिला पर विराजमान हैं—वे रेशमी पीताम्बर धारण किए हुए थे, उनके बालों में मयूरपंख सुशोभित हो रहा था, और वे अपनी बाँसुरी से मन्त्रमुध कर देने वाले विविध स्वर बजाने में तल्लीन थे। चमचमाते चन्द्रमा के धवलप्रकाश में वे नीलवर्णी लग रहे थे।

हाँफती हुई गोपियाँ उन्हें देखकर वहीं ठिठक गईं।

“वे अलग लग रहे हैं,” एक ने धीमे स्वर में कहा।

“वे किसी भगवान की तरह लग रहे हैं!” दूसरी ने कहा।

“वे भगवान ही हैं,” राधा कह उठी, यद्यपि उन्हें अपने शब्दों का अर्थ पूरी तरह समझना अभी बाक़ी था।

श्रीकृष्ण यह खेल देखते रहे; अपनी दृष्टि से ही उन्होंने हर गोपी का स्वागत किया। जैसे ही उनकी दृष्टि ने हर गोपी को देखा, हर एक को लगा कि कान्हा की आँखें उसकी आँखों से मिलकर उसका स्वागत कर रही हैं। वे सहम-सी गईं; अब शर्माती हुईं, वे सब एक-दूसरे के पास-पास आकर खड़ी हो गईं और प्रतीक्षा करने लगीं कि अब आगे क्या होगा।

कृष्ण ने पल भर के लिए अपनी बाँसुरी को अपने अधरों से दूर किया और अपने हाथों से हवा में एक बड़ा घेरा बनाया—जो गोपियों के लिए एक आमन्त्रण था, ‘रास’ आरम्भ करने का आमन्त्रण। उनमें से जो स्त्री अन्य स्त्रियों से निडर थी वह तुरन्त ही आगे बढ़ी और नृत्य करने लगी। उसे देखकर, जल्द

ही, सभी उसके साथ नृत्य करने लगीं। अपनी बाहें उठाती हुईं, खुशी से झूमती हुईं वे सभी आनन्दविभोर होकर नृत्य करने लगीं। कृष्ण के सान्निध्य में उन्हें ऐसा लग रहा था कि वे स्वतन्त्र हैं और देवी भगवती की तरह सुन्दर हैं। वे हाथों से तालियाँ बजाती जा रही थीं, पायलें छनछन करती जा रही थीं, अपने ग्वाले राजकुमार के इर्द-गिर्द, सभी गोपियाँ घेरों में मुक्तरूप से नृत्य करती जा रही थीं।

* * *

© २०२३ एस. वाय. डी. ए. फ़ाउन्डेशन®। सर्वाधिकार सुरक्षित।